दैनिक जागरण

जब तक डूबने का डर रहेगा तब तक तैरना नहीं सीखा जा सकता

प्रियंका का शक्ति प्रदर्शन

कांग्रेस महासचिव बनने के बाद कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी के साथ रोड शो करने लखनऊ पहुंचीं प्रियंका गांधी वाड्रा के स्वागत में जैसी भीड़ जुटी उससे उनके साथ कांग्रेस के अन्य नेताओं का उत्साहित होना स्वाभाविक है, लेकिन केवल भीड़ की भारी जुटान किसी दल के उभार का परिचायक नहीं हो सकती। वैसे भी यह पहली बार नहीं है जब कांग्रेस के ऐसे किसी रोड शो में भारी भीड़ उमड़ी हो। बहुत दिन नहीं हुए जब उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनावों के पहले लखनऊ में राहुल गांधी एवं अखिलेश यादव के ऐसे ही रोड शो में भारी भीड़ उमड़ी थी और सभी को पता है कि इसका नतीजा क्या रहा? इसमें दोराय नहीं कि गांधी परिवार का सदस्य होने के नाते प्रियंका के प्रति आम लोगों में एक आकर्षण है। यह आकर्षण भीड़ तो जमा कर सकता है, लेकिन यह जरूरी नहीं कि उसे वोटों में भी तब्दील कर सके। आखिर यह एक तथ्य है कि विधानसभा चुनावों के दौरान अमेठी और रायबरेली में प्रियंका की तमाम सक्रियता के बाद भी इन दोनों जिलों की ज्यादातर विधानसभा सीटों पर कांग्रेस को पराजय का सामना करना पड़ा था। स्पष्ट है कि उनकी राजनीतिक परीक्षा होना अभी शेष है।

प्रियंका गांधी वाड्रा ने लखनऊ रवाना होने के पहले एक संदेश के जरिये यह कहा कि हम सब मिलकर एक नए ढंग की राजनीति करेंगे। पता नहीं कि नई तरह की राजनीति से उनका आशय क्या है, लेकिन सभी को पता है कि राहुल गांधी जब महासचिव बने थे तो उन्होंने भी कुछ इसी तरह की बातें की थीं। तब उन्होंने युवाओं को राजनीति में आगे बढ़ने के अवसर देने और पार्टी में आंतरिक लोकतंत्र को मजबूत करने की बातें की थीं, कांग्रेस अध्यक्ष बनने के एक साल बाद ही उन्होंने पार्टी को मजबूत करने के लिए बहन प्रियंका को महासचिव बना दिया। प्रियंका का राजनीति में स्वागत है, लेकिन आखिर कांग्रेस या फिर अन्य किसी दल में कितने ऐसे नेता हैं जो सीधे महासचिव बन जाते हैं? प्रियंका के सीधे महासचिव बनने से तो यही साबित हुआ कि कांग्रेस गांधी परिवार के बिना आगे बढ़ना नहीं सीख पाई है। भले ही प्रियंका को कांग्रेस महासचिव के रूप में पूर्वी उत्तर प्रदेश का प्रभारी बनाया गया हो, लेकिन वह निर्विवाद रूप से राहुल गांधी के बाद सबसे प्रभावी नेता बन गई हैं। यह सही है कि इससे कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं को कोई परेशानी नहीं होने वाली, लेकिन इस सबसे परिवाद की राजनीति को तो प्रश्रय मिलता ही है। निःसंदेह गांधी परिवार कांग्रेस की एक ताकत है, लेकिन बदलते हुए भारत में प्रियंका की सफलता उनके राजनीतिक कौशल पर निर्भर करेगी, न कि इस पर कि उनकी शक्ल-सूरत दादी इंदिरा गांधी से बहुत मिलती है। कार्यकर्ताओं को उत्साहित करने के लिए यह उम्मीद जगाने में हर्ज नहीं कि उत्तर प्रदेश में अगली सरकार कांग्रेस की बनने वाली है, लेकिन राज्य की जमीनी हकीकत कुछ और ही बयान करती है। लखनऊ रोड शो में चौकीदार चोर है के नारे लगवाने वाले राहुल गांधी इस हकीकत की भी अनदेखी नहीं कर सकते कि राबर्ट वाड्रा कैसे गंभीर आरोपों से घिरे हुए हैं।

बच्चों की चिंता

झारखंड में बच्चों की देखभाल में जुटी संस्थाओं को चाइल्ड फ्रेंडली बनाने का फरमान सरकार ने जारी किया है। साथ ही जेजे एक्ट के प्रावधान के तहत घर जैसी बुनियादी सुविधाएं मुहैया कराने की बात कही है। इसके लिए उसने 12 चेक प्वाइंट तैयार किए हैं। इनमें बच्चों का ट्रैक रिकॉर्ड नियमित रूप से पोर्टल पर अपलोड करना, बच्चों का केयर प्लान तैयार करना, सीसीटीवी, कंप्यूटर फोन की व्यवस्था, व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का संचालन, बेहतर चिकित्सा, काउंसलिंग, कर्मचारियों का पुलिस सत्यापन आदि शामिल हैं। इन मानकों का किसी भी स्तर पर उल्लंघन न हो, सरकार ने सीडीपीओ को इसकी मॉनिटरिंग की जवाबदेही सौंपी है। बच्चों के संतुलित मानसिक और शारीरिक विकास को केंद्र में रखकर सरकार के स्तर से जारी इस निर्देश की सराहना की जानी चाहिए। माना जा रहा है कि पिछले दिनों गोरखपुर और मुजफ्फरपुर स्थित बाल गृहों में घटी घटना तथा रांची स्थित निर्मल हृदय से बच्चों को बेचे जाने का मामला प्रकाश में आने के बाद सरकार किसी तरह का खतरा मोल लेना नहीं चाहती। इससे इतर यह भी देखना होगा कि इन बाल गृहों में वही बच्चे रह रहे हैं, जिनके या तो माता-पिता नहीं हैं या वे कहीं भटकते हुए पाए गए या फिर बाल तस्करी, बंधुआ मजदूरी आदि से मुक्त कराए गए हैं। सरकारी आंकड़ों की बात करें तो राज्य में ऐसी लगभग 120 संस्थाएं निबंधित हैं। इनमें से सरकार की देखरेख में महज दो दर्जन संस्थाएं ही संचालित हैं। शेष को सरकार ने महज संस्था चलाने भर की अनुमति दे रखी है। उन्हें सरकार के स्तर से किसी तरह का लाभ नहीं दिया जाता। ऐसे में वे सरकार की इस सख्ती का कितना अनुपालन करेंगी, भविष्य के गृह में है। अगर संस्थाएं पूरी तरह से जेजे एक्ट के प्रावधानों के अनुरूप बच्चों का लालनपालन करती हैं तो संस्थाओं के रखरखाव पर भारी भरकम राशि खर्च होगी, जो सभी संस्थाओं के लिए संभव नहीं है। ऐसे में अगर संस्थाएं इस कार्य से अपना हाथ खींच लेती हैं तो बच्चों का भरण-पोषण सरकार के लिए परेशानियों का सबब बन सकता है। ऐसे में जरूरत है कि आपसी तालमेल के साथ संस्थाओं के संचालन की ताकि बच्चों का हित प्रभावित न हो।

नदियों के मुक्त बहाव की महत्ता

डॉ. भरत झुनझुनवाला

अपनी शुद्धि का जो काम गंगा स्वयं करती है उसे करने के लिए 20,000 करोड़ खर्च करने की क्या जरूरत है? इसके लिए बस उसकी धारा अविरल बनाए रखनी होगी

माना जा रहा है कि केंद्र सरकार गंगा की छह सहायक नदियों भागीरथी, मंदाकिनी, पिंडर, नंदिकिनी, धौलीगंगा और अलकनंदा पर नई जल विद्युत परियोजनाएं नहीं बनाएगी। केंद्र सरकार को इस निर्णय के लिए साधुवाद, लेकिन इन्हीं नदियों पर निर्माणाधीन चार जल विद्युत परियोजनाओं का विषय अभी भी लटका हुआ है। कुछ समय पूर्व आइआइटी कानपुर के पूर्व प्रोफेसर जीडी अग्रवाल उर्फ सानंद स्वामी ने इन परियोजनाओं को बंद करने की मांग के न पूरा होने के कारण अपना शरीर उपवास के बाद त्याग दिया था। वर्तमान में उन्ही मांगों की पूर्ति के लिए केरल के 26 वर्षीय युवा ब्रह्मचारी आत्मबोधानंद उपवास करते हुए तपस्या में रत हैं। निर्माणाधीन परियोजनाओं का पहला विषय गंगा की निर्मलता का है। केंद्र सरकार ने लगभग 20,000 करोड़ खर्च कर गंगा में गिरने वाले नालों का शुद्धिकरण करने के लिए सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट लगाने का बीड़ा उठाया है। यह कदम सही दिशा में है, परंतु आधा-अधूरा है, क्योंकि इससे हम गंगा की अपने को स्वयं शुद्ध करने की क्षमता को नष्ट कर रहे हैं। नेशनल एनवायरमेंट इंजीनियरिंग रिसर्च इंस्टीट्यूट, नागपुर ने बताया है कि गंगा की गाद में विशेष प्रकार के कलिफाज नाम के लाभप्रद कीटाणु होते हैं। ये कलिफाज हानिप्रद कालीफार्म नामक कीटाणु को नष्ट करते हैं।

अमूमन एक प्रकार का कलिफाज एक ही प्रकार के कालीफार्म को नष्ट करता है, लेकिन गंगा के विलक्षण कलिफाज कई प्रकार के कालीफार्म को एक साथ समाप्त कर देते हैं। इनसे गंगा की स्वयं को शुद्ध करने की क्षमता बनती है। ये कलिफाज गाद में रहते हैं। निर्माणाधीन जल विद्युत परियोजनाओं से इस गाद का बनना बाधित होता है। गंगा के पानी को परियोजनाओं द्वारा टनल या झील में डाला जाता है। पानी और पत्थर की रगड़ समाप्त हो जाती है और इस गाद का बनना बंद हो जाता है जिससे इन कलिफाज का नष्ट होना निश्चित है। गंगा की निर्मलता हासिल करने के दो उपाय हैं। एक यह कि सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट लगाए जाएं दूसरा यह कि निर्माणाधीन परियोजनाओं को निरस्त किया जाए, गंगा की गाद को बहने दें और गंगा की स्वयं को साफ रखने की क्षमता को बनाए रखें। जो काम गंगा स्वयं करती है उसे करने के लिए 20,000 करोड़ खर्च करने की क्या जरूरत है?

दूसरा विषय बहती गंगा यानी अविरल गंगा के सौंदर्य का है। उत्तराखंड सरकार का मानना है कि टिहरी जैसी झीलों का भी अपना सौंदर्य होता है। यह सही भी है। टिहरी झील में जल क्रीड़ा को बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन प्रश्न है कि अविरल धारा का सौंदर्य अधिक मनोरम है या झील का? भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की द्वारा किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि देश के नागरिकों को गंगा के अविरल प्रवाह से मिले सुख की कीमत 23,255 करोड़ रुपये प्रति वर्ष है। मैं नहीं समझता कि टिहरी झील से इस प्रकार का लाभ देश को हो सकेगा। गंगा के बहते रहने से जो जनता को लाभ मिलता है हमें उसका संज्ञान लेना चाहिए। विश्व स्तर पर नदियों के मुक्त प्रवाह के सौंदर्य को पुनर्स्थापित किया जा रहा है। अमेरिका के वाशिंगटन राज्य में अल्वा नदी पर एक जल विद्युत परियोजना थी। वहां के लोगों ने मांग उठाई कि वे अल्वा नदी का मुक्त बहाव पुनर्स्थापित करना चाहते हैं जिससे वे उसमें नाव चला सकें और मछली मार सकें। वाशिंगटन की सरकार ने सर्वे कराया और पाया कि राज्य के लोग नदी के मुक्त बहाव को बहाल करने के लिए अधिक राशि देने को तैयार थे। जबकि अल्वा डैम से बन रही बिजली इसकी तुलना में बहुत कम थी। इस आधार पर अल्वा डैम को हटा दिया गया और आज अल्वा नदी मुक्त प्रवाह से बह रही है।

अवधेश राजपूत

देश के विकास में बिजली का बहुत महत्व है। बिजली की मांग सुबह और शाम के समय अधिक होती है। जल विद्युत परियोजनाओं से बिजली को तत्काल बनाया अथवा बंद किया जा सकता है। सुबह और शाम ज्यादा बिजली की जरूरत को पूरा करने के लिए जल विद्युत को उत्तम माना जाता है, लेकिन इसके सस्ते विकल्प उपलब्ध हैं। आज नई जल विद्युत परियोजना से उत्पन्न बिजली का मूल्य लगभग 7 से 11 रुपये प्रति यूनिट पड़ता है। इसकी तुलना में सौर ऊर्जा का मूल्य 3 से 4 रुपये प्रति यूनिट पड़ता है। दिन में बनी इस सौर ऊर्जा को सुबह और शाम की बिजली में परिवर्तित किया जा सकता है। बड़ी बैट्रियां बनाई जा सकती हैं। पानी को दिन में नीचे से ऊपर पंप करके सुबह और शाम उसे छोड़कर दोबारा बिजली बनाई जा सकती है। दिन में बनी सौर ऊर्जा को सुबह और शाम की पीकिंग पावर बनाने का खर्च मात्र 50 पैसे प्रति यूनिट पड़ता है। अतः सौर ऊर्जा से बनी पीकिंग पावर का मूल्य चार से पांच रुपये पड़ता है जो कि जल विद्युत से बहुत कम है।

उत्तराखंड के आर्थिक विकास का भी प्रश्न है। जल विद्युत परियोजनाओं से राज्य को 12 प्रतिशत मुफ्त बिजली मिलती है। यहां प्रश्न है कि गंगा के किन गुणों का हम उपयोग करना चाहते हैं। बिजली बनाने में हम गंगा के ऊपर से नीचे गिरने के भौतिक गुण का उपयोग करते हैं, लेकिन गंगा का इससे ऊपर मनोवैज्ञानिक गुण भी है। एक अध्ययन में मैंने पाया कि गंगा में डुबकी लगाने वाले मानते हैं कि गंगा के आशीर्वाद से उनका स्वास्थ्य ठीक हो जाता है। गंगा के इस मनोवैज्ञानिक गुण का उपयोग करके भी उत्तराखंड का विकास किया जा सकता है। गंगा के बहाव को मुक्त छोड़ दिया जाए और उसके किनारे यूनिवर्सिटी, अस्पताल और सॉफ्टवेयर पार्क स्थापित किए जाएं तो छात्रों एवं मरीजों को अधिक लाभ होगा। बड़ी संख्या में रोजगार के उत्तम अवसर भी सृजित होंगे। बताते चलें कि जल विद्युत परियोजनाओं के बनने के बाद इनमें मात्र 100 कर्मचारियों की ही जरूरत होती है। इस तरह अंत में रोजगार का हनन ही होता है।

निर्माणाधीन परियोजनाओं के पास सभी कानूनी स्वीकृतियां हैं। अतः इन्हें सरकार मनचाहे तरीके से बंद नहीं कर सकती है, लेकिन जिस प्रकार इंदिरा गांधी ने बैंकों और कोयला खदानों का राष्ट्रीयकरण किया था, उसी प्रकार इन जल विद्युत परियोजनाओं का केंद्र सरकार राष्ट्रीयकरण कर सकती है। केंद्र सरकार द्वारा 50,000 करोड़ रुपये के खर्च से ऑल वेदर रोड यानी हर मौसम में टिकने वाली सड़क बनाई जा रही है जिससे लोग गंगोत्री, केदारनाथ और बदरीनाथ के दिव्य मंदिरों का प्रसाद आसानी से प्राप्त कर सकें। वर्तमान में इन चार निर्माणाधीन जल विद्युत परियोजनाओं पर लगभग 5,000 करोड़ रुपये ही खर्च हुए हैं। देश की जनता तक इन दिव्य मंदिरों के प्रसाद को पहुंचाने का सरल एवं सस्ता उपाय है कि इन परियोजनाओं को 5,000 करोड़ रुपये देकर हटा दिया जाए। तब तीर्थयात्रियों को इन दिव्य मंदिरों का प्रसाद प्राप्त करने के लिए 50,000 करोड़ की ऑल वेदर रोड से यात्रा नहीं करनी होगी और इन मंदिरों के प्रसाद को गंगा स्वयं मैदान तक पंहुचा देगी। गंगा के मुक्त बहाव के इन लाभों को हासिल करने के साथ-साथ केंद्र सरकार को उत्तराखंड को गंगा बोनस देना चाहिए जिससे जल विद्युत परियोजनाओं के न बनाने से राज्य को किसी प्रकार की हानि न हो।

(लेखक वरिष्ठ अर्थशास्त्री एवं आइआइएम बेंगलूर के पूर्व प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

स्वयं में सुधार से दूर भागते दल

आज भारत का पढ़ा-लिखा तबका भी यह मानने लगा है कि राजनीति एक गंदी चीज है। वह चूंकि साफ-सुथरी हो ही नहीं सकती, लिहाजा उससे बचकर रहना चाहिए। शायद इसी वजह से आज बोलचाल की भाषा में राजनीति शब्द का प्रयोग नकारात्मक अर्थ में होने लगा है। सवाल यह खड़ा होता है कि क्या अब से पहले भी राजनीति शब्द का इस्तेमाल इसी प्रकार होता था? स्कूली जीवन में मैंने सरदार पटेल पर एक कविता पढ़ी थी, जिसकी एक पंक्ति थी, ''राजनीति' का कुशल खिलाड़ी वह सरदार पटेल।'' पटेल की कुशल राजनीतिक निपुणता का ही फल था कि 565 रियासतों का भारत के साथ एकीकरण किया जा सका। जहां आज राजनीति करने के कारण नेताओं को सामान्यतः बुरी दृष्टि से देखा जाने लगा है वहीं सरदार पटेल की गणना राजनीति करने के कारण भारत के महापुरुषों में की जाती है। भले ही राजनीति को आज नकारात्मक दृष्टि से देखा जाने लगा हो, लेकिन महात्मा गांधी और सरदार पटेल के समय में ऐसा नहीं था। राजनीति करना तब एक सकारात्मक कार्य माना जाता था। जो राजनीति करते थे, जनता उन्हें आदर की दृष्टि से देखती थी।

स्वतंत्र भारत के राजनीतिज्ञों की प्रथम पीढ़ी गांधी जी के नेतृत्व में विकसित हुई थी। गांधी जी ने जिस राजनीति को जन्म दिया, धर्म और नैतिकता के बिना उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। अतः हमारे नेताओं ने उस समय एक साफ-सुथरी स्वच्छ राजनीति बनाने की चेष्टा की। डॉ. आंबेडकर, डॉ. लोहिया, पं. नेहरू, श्यामाप्रसाद मुखर्जी, कृपलानी, नरेंद्र देव, अशोक मेहता, जयप्रकाश नारायण, अटल बिहारी वाजपेयी जैसे नेताओं ने नैतिक राजनीति के निर्माण के लिए पूरी कोशिश की। डॉ. लोहिया जब प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के महामंत्री थे तब उनकी पार्टी की सरकार केरल में बनी। स्वतंत्र भारत की वह पहली गैर-कांग्रेसी सरकार थी। 1955 में सरकार के विरुद्ध मजदूरों का एक आंदोलन कुछ मांगों को लेकर प्रारंभ हुआ। आंदोलनकारियों का एक बड़ा प्रदर्शन त्रिवेंद्रम में हुआ। प्रदर्शन को रोकने के लिए अनियंत्रित भीड़ पर पुलिस को गोली चलानी पड़ी। सात लोग मारे गए। उस समय लोहिया जी इलाहाबाद में थे। घटना के बारे में जब उन्हें पता चला तब उन्होंने तुरंत कहा कि मुख्यमंत्री सहित पूरा मंत्रिमंडल त्यागपत्र दे, घटना की उच्चस्तरीय जांच हो और दोषी लोगों को दंडित किया जाए। लोहिया जी का कहना था कि आज स्वतंत्र देश की निहत्थी जनता पर चुनी हुई सरकार को गोली चलाना पड़े तो यह शर्मनाक बात है। उसके बाद पार्टी के सदस्यों ने बैठक की। विचार-विमर्श हुआ। लोहिया जी की बात उन्होंने नहीं सुनी। उनका मानना था कि चूंकि गैर-कांग्रेसी दल को पहली बार सरकार बनाने का मौका मिला है, लिहाजा उसे खोना नहीं चाहिए। लोहिया जी अपनी बात पर डटे रहे। मतभेद होने के कारण उन्होंने न केवल महामंत्री पद से, बल्कि पार्टी की प्राथमिक सदस्यता से भी त्यागपत्र दे दिया। यह थी उनकी नैतिकता की राजनीति। लालबहादुर शास्त्री जब रेलमंत्री थे तब एक रेल दुर्घटना में 140 यात्रियों की मृत्यु के कारण उन्होंने रेल मंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया। इसकी मिसाल आज भी दी जाती है।

सवाल है कि कहां विलुप्त हो गई भारतीय राजनीति की वह नैतिकता? कौन है इसका दोषी? क्या हमारा मौजूदा लोकतांत्रिक ढांचा इसके लिए दोषी है? ऐसी उसमें क्या

उदय प्रकाश अरोड़ा

सुशासन के लिए जरूरी है कि सियासी दल पहले स्वयं को सुशासित करते हुए आंतरिक लोकतंत्र की स्थापना करें

खामियां हैं जिसके कारण देश में आज राजनीति हेय का विषय बनती जा रही है? कभी प्राचीन एथेंस के लोकतंत्र की आलोचना करते हुए प्लेटो ने लिखा था, 'लोकतंत्र का सबसे बड़ा दोष यह है कि वह एक आम आदमी को विदेश नीति, अर्थव्यवस्था और इसी तरह के दूसरे गंभीर मुद्दों पर सदन में बोलने, अपना मत देने और कार्यकारिणी में निर्वाचित होकर कार्यवाही करने की पूरी इजाजत देता है, जबकि ये विषय ऐसे हैं कि केवल विशेषज्ञ ही इनके बारे में सही दिशा में सोच सकते हैं।' प्लेटो ने सरकार चलाने वालों में दार्शनिकों और चिंतकों के शामिल किए जाने पर सबसे अधिक जोर दिया था। लोकतंत्र का दूसरा बड़ा दोष उन्होंने यह माना कि इस व्यवस्था में नेताओं के चुने जाने में वे कारण प्रभावी हो जाते हैं जिनका प्रशासन चलाने से कुछ लेना-देना नहीं होता, जैसे कि धन का खेल, वंश और परिवार की पृष्ठभूमि और जनता को बहकाने वाले लच्छेदार भाषण। उनके हिसाब से तीसरा दोष था कि लोकतंत्र देश को अराजकता (भीड़तंत्र) की दिशा में ले जा सकता है। आज प्राचीन एथेंस नहीं है, फिर भी प्लेटो की आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पहले कही गई ये बातें भारत के वर्तमान लोकतंत्र के संदर्भ में बहुत कुछ सच लगती है। इसका यह अर्थ नहीं कि हम लोकतंत्र को तिलांजलि दे दें। विशेषज्ञों ने तमाम बुराइयों के बावजूद लोकतंत्र को मौजूदा किसी दूसरी व्यवस्था से बेहतर माना है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि विभिन्न कारणों से भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में कई खामियां हैं। दरअसल हमारे संविधान निर्माताओं ने देश में लोकतंत्र की जिस व्यवस्था को चुना वह है संसदीय प्रजातंत्र। संसदीय व्यवस्था का आधार हैं राजनीतिक दल। एक स्वस्थ संसदीय व्यवस्था के संचालन के लिए आवश्यक है कि राजनीतिक दल प्रजातंत्र को मजबूत करें, लेकिन वे ऐसा नहीं कर रहे हैं। संसदीय कार्यवाही का गिरता स्तर गंभीर समस्या बन गया है तो राजनीतिक दलों के कारण ही। जब तक पार्टियां स्वयं जनतांत्रिक नहीं होंगी, उनके द्वारा लोकतंत्र कैसे स्थापित हो सकता है? भारत के लोकतंत्र की आज सबसे बड़ी समस्या यह है कि पार्टियों के भीतर 'आंतरिक लोकतंत्र' का अभाव है। लगभग सभी पार्टियां परिवारवाद, वंशवाद, जातिवाद अथवा व्यक्तिवाद की शिकार हैं। पार्टियों के भीतर चुनाव नहीं होते। मुखिया द्वारा पदाधिकारी मनोनीत किए जाते हैं।

सुशासन के लिए जरूरी है कि पहले राजनीतिक दल अपने को सुशासित करें। परिवार, वंश और व्यक्ति पूजा छोड़कर दल के भीतर जनतंत्र लाएं। ऐसा होने पर ही सुशासन को महत्ता मिलेगी। आज देश में दलों की संख्या निरंतर बढ़ जा रही है। अब तक 600 से अधिक राजनीतिक दलों का पंजीकरण हो चुका है। यह एक हास्यास्पद स्थिति है। इस पर रोक लगनी चाहिए। 'दलों में आंतरिक लोकतंत्र' लाना इस समय भारतीय राजनीति में सुधार लाने के लिए सबसे बड़ी जरूरत है। इसके लिए 2019 के आम चुनाव में जनता को चाहिए कि वह 'दलों में आंतरिक लोकतंत्र' को मुद्दा बनाए। इसके लिए पार्टियों पर दबाव डाले और जरूरत पड़े तो आंदोलन भी करे, क्योंकि अगर राजनीति नहीं सुधरी तो देश भी नहीं सुधरेगा।

(लेखक जेएनयू के पूर्व ग्रीक चेयर प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

उच्च जीवन

जीवन में सफलता की इच्छा अधिकांश लोगों को होती है। ऐसे लोग चाहते हैं कि उनका समाज में वर्चस्व रहे, उनके पास सर्वाधिक भौतिक संसाधन हों। इस तरह की इच्छा का होना कोई खराब तो नहीं, लेकिन इसके लिए कड़ी मेहनत की जरूरत होती है। प्रायः देखने में आता है कि अधिकांश लोग इसी मामले में विफल हो जाते हैं। वे इस तरह की सारी उपलब्धियां रातोंरात प्राप्त करना चाहते हैं। ऐसे लोग इस भाव के चलते परिश्रम, धैर्य की जगह उतावले हो नकारात्मक रास्ता अपनाने लगते हैं और छल, धोखा, अनैतिक ढंग से कुछ हासिल कर तो लेते हैं, लेकिन धीरे-धीरे उनमें एक अज्ञात भय भी समाने लगता है। वैसे भी कहा गया है कि किसी भी उपलब्धि के लिए ठोस आधार उसी प्रकार होना जरूरी है जिस प्रकार किसी भवन या महल के लिए मजबूत आधार की जरूरत होती है।

जीवन में विविध प्रकार की उपलब्धियों के लिए धैर्य और धर्म का रास्ता नहीं छोड़ना चाहिए। दूसरों का हिस्सा हड़प कर प्राप्त उपलब्धि दोषपूर्ण है। इससे कलह का माहौल बनता है। कोई भी सांसारिक सुख प्राप्त करने के पहले स्वयं से बात करनी चाहिए। जो ऐसा नहीं करता है, उसे दुख मिलता है। इसीलिए कहा गया है कि बिना विचारे जो करे सो पाछे पछताय। हर कोई एक-दूसरे का विश्लेषण तो कर रहा है, पर खुद आत्म-विश्लेषण पर उसका ध्यान नहीं जा रहा है। यदि कोई व्यक्ति दूसरे के घर के कूड़े-करकट की सफाई करता है तो उस व्यक्ति का घर साफ हो जाएगा, पर उसके अपने घर में गंदगी बनी रहेगी।

हर व्यक्ति को अपना घर साफ करना चाहिए। यही बात आचरण के लिए भी जरूरी है। व्यक्ति इस बात की चिंता छोड़कर कि कौन कैसा है, वह अपने आचरण को उत्तम बनाए तो उसकी ही छवि उत्तम होगी। एक न एक दिन उसकी ख्याति ही नहीं बढ़ेगी, बल्कि उसके परिवार के लोग भी उत्तम आचरण अपनाकर ख्याति प्राप्त करने लगेंगे। कोई भी व्यक्ति उच्च उपलब्धियां पाने के लिए सुनियोजित तरीके से कार्य करे तो उसे सफलता जरूर मिलेगी। विद्वानों ने कहा है कि किसी भी क्षेत्र में प्रयास करने से भी मनोरथ पूरे नहीं हो रहे हैं तो प्रयत्न में कहीं न कहीं कोई दोष रह गया है। व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने प्रयत्न में सुधार कर सफलता के मार्ग पर आगे बढ़े।

सलिल पांडेय

महंगी दवाओं का बोझ

मिताली जैन

एनपीपीए उन्हीं दवाइयों के दामों को ही नियंत्रित कर सकता है, जिनकी बाजार में हिस्सेदारी एक प्रतिशत से अधिक हो

दवाओं के साथ यह समस्या है कि इसे व्यक्ति अपनी इच्छा से नहीं खरीद सकता। वास्तव में यह एक मजबूरी का सौदा है, जिसमें व्यक्ति चिकित्सक द्वारा लिखित दवाई ही खरीदता है। जब दवा के दाम जेब पर भारी पड़ने लगते हैं तो इलाज कराना असंभव-सा प्रतीत होने लगता है। हालांकि अब दवाओं के दामों में बढ़ोतरी को देखते हुए केंद्र सरकार इन पर नियंत्रण करने के लिए नया फॉर्मूला लाने पर विचार कर रही है।

दरअसल दवाओं के दाम तय करने की मौजूदा व्यवस्था 2013 के दवा मूल्य नियंत्रण आदेश के जरिये वजूद में आया था। इसके अंतर्गत दवा बनाने वाली कंपनी की दवा के दामों का औसत निकाला जाता है और फिर उसके हिसाब से कीमतें तय होती हैं। इस प्रकार यह फॉर्मूला कहीं न कहीं बाजार से प्रभावित होता है। इतना ही नहीं, इस व्यवस्था के अनुसार हर साल दवा के दाम में 10 प्रतिशत की बढ़ोतरी की जा सकती है, जिसके कारण हर गुजरते साल के साथ दवाओं के दाम बढ़ जाते हैं। ऐसे में आम जनता के लिए इलाज करवाना किसी जंग जीतने से कम नहीं है। वैसे साल 2013 से पहले दवा की लागत के हिसाब से उसकी कीमत तय की जाती थी और अब सरकार एक बार फिर दवा की लागत के हिसाब से ही उसकी कीमत तय करने पर विचार कर रही है। माना जा रहा है कि इससे दवा के दाम में काफी हद तक गिरावट आएगी।

यहां यह समझना आवश्यक है कि राष्ट्रीय औषधि मूल्य निर्धारण प्राधिकरण (एनपीपीए) का देश में बनने वाली सभी दवाइयों पर नियंत्रण नहीं है। आयुर्वेदिक दवाइयां भी एनपीपीए के नियंत्रण से बाहर हैं। एनपीपीए महज उन दवाइयों के दामों को ही नियंत्रित कर सकता है, जिनकी बाजार में एक प्रतिशत से अधिक की भागीदारी हो। अभी सरकार 24 प्रतिशत दवाओं की कीमतों का ही निर्धारण करती है। देश में एक सक्षम एजेंसी के अभाव में जनता की जेब लगातार कटती ही जा रही है। हालांकि पिछले दिनों दवा निर्माताओं की मनमानी को रोकने के लिए केंद्र सरकार ने सभी दवाओं की कीमतों को नए फार्मास्यूटिकल इंडेक्स से जोड़ने की योजना भी बनाई थी। तब कहा गया था कि वह इंडेक्स देश में बिकने वाली दवाइयों की कीमत निर्धारित करने का बेंचमार्क बनेगा। इसमें उन दवाइयों को भी शामिल किया जाएगा जो अभी दवा मूल्य नियंत्रण आदेश में नहीं आती हैं। हालांकि अभी इस योजना को वास्तविकता के धरातल पर उतरना बाकी है।

दवाओं के मूल्य को नियंत्रण के दौरान जनहित को भी ध्यान में रखना बेहद जरूरी है। अगर देश भर में दवाओं की अधिकतम कीमतें तय की जाएं तो यकीनन आम आदमी के लिए यह एक राहत भरा कदम होगा। इससे लोगों के चिकित्सा खर्च में 80 से 90 प्रतिशत की कमी आ जाएगी। इन सबके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि लोगों को धोखाधड़ी से बचाया जाए। इसे रोकने के लिए लोगों को दवा की कीमतों के प्रति जागरूक करना आवश्यक है। उन्हें इस बात का अंदाजा होना चाहिए कि किसी भी दवा की अधिकतम कीमत कितनी हो सकती है ताकि दवा निर्माता कंपनी एवं विक्रेता उनसे कई गुना अधिक दाम न वसूल सकें।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

समाज से कटता इंसान

सामाजिकता का सिमटता दायरा शीर्षक से लिखे अपने लेख में गिरीश्वर मिश्र ने सामाजिक समरसता और समावेशन विषय पर अपनी राय व्यक्त की है। एक हिंदी फिल्म का गाना है, 'अपने लिए जिए तो क्या जिए। ऐ दिल, तू जी जमाने के लिए।' अर्थात मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही यह स्वयं का, समाज का और देश का कल्याण कर सकता है। जाहिर है यदि यह समाज से कटा तो इसका अस्तित्व तो मिटेगा ही, समाज और देश भी विकास पथ पर लड़खड़ा जाएंगे। इसी संदर्भ में कहा भी जाता है कि 'अकेले चरने की प्रवृत्ति तो पशु की होती है।' वैसे जीवों में सबसे ज्यादा बुद्धिमान इंसान ही होता है। इसके इस्तेमाल से वह अपनी हर जरूरत के सामान जुटा लेता है। यदि वह चाहे तो अपने अतिरिक्त संसाधनों से समाज के दूसरे जरूरतमंदों की हरसंभव मदद कर सकता है। दूसरे शब्दों में कहें तो सभी मनुष्य यदि लोकसेवा की भावना का दीपक अपने अंदर जलाएं तो बहुत समस्याओं का समाधान निकल सकता है। हालांकि यह तभी संभव है जब मनुष्य सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय रहेगा। दुख की बात है कि आज भागदौड़ और भौतिकतावाद की अंधी दौड़ में समाज या देश की किसी को कोई चिंता नहीं रही है। सामाजिकता के इस सिमटते दायरे का मुख्य कारण है लोगों में स्वार्थ का हावी होना और नैतिकता की कमी होना। इसके अलावा आज जिस तरह समाज धर्म और जाति में बंटता जा रहा है वह भी इसका एक बड़ा कारण है। अच्छा होता लेखक इसका भी थोड़ा-बहुत उल्लेख करते कि समाज को इस समस्या से कैसे निकाला जा सकता है?

raju09023693142@yahoo.com

मेलबाक्स

शौचालय सर्वहितकारी

पूरे देश में स्वच्छ भारत मिशन के तहत खुले में शौच से मुक्ति के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। अनेक राज्यों के कई जिले ओडीएफ घोषित किए जा चुके हैं। हालांकि देश में अभी भी बड़ी संख्या में लोग खुले में शौच के लिए जाते हैं। कुछ मजबूरीवश ऐसा करते हैं, जबकि कुछ जागरूकता के अभाव में। अभी हाल में राजस्थान के सवाईमाधोपुर जिले के कुंडेरा गांव में बाहर खुले में शौच के लिए गई महिला पर बाघ ने आक्रमण कर दिया। इससे महिला की मौत हो गई। साफ है कि केंद्र सरकार की योजना का लाभ भी हर व्यक्ति तक नहीं पहुंचा है। खुले में शौच की प्रथा एक ऐसी सामाजिक बुराई है जिसने सदियों से लोगों को जकड़ रखा है। शौचालय के उपयोग से छेड़खानी और दुष्कर्म जैसी घटनाओं को रोकने में भी मदद मिलती है। बीमारियों से भी बचाव होता है। फिर यह विषय महिलाओं की मर्यादा और इज्जत से भी जुड़ा हुआ है। इस संबंध में बड़े पैमाने पर जागरूकता अभियान चलाकर लोगों की सोच को बदलने की आवश्यकता है। जहां व्यक्तिगत शौचालय बनाना संभव न हो वहां पर सार्वजनिक शौचालय बनाकर भी लोगों को सुविधा उपलब्ध करवाई जा सकती है। शौचालय के उपयोग के लिए लोगों को प्रेरित करना सबसे महत्वपूर्ण है।

lalit.mahalkari@gmail.com

कड़ी कार्रवाई की दरकार

उप्र और उत्तराखंड में जहरीली शराब से सौ से अधिक लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा है। कानून के रखवाले और सरकारी अफसरों की अनदेखी एवं भ्रष्टाचार के कारण शराब माफिया दिनदहाड़े शराब बनाकर आम जनता को बेच रहे हैं और